Subscription		India	Overseas
Single Copy	:	Rs. 300	US$ 10
Annual (2 copies)	:	Rs. 500	US$ 15
Life Subscription	:	Rs.5000	US$ 75

SANGITIKA

Published by
RASIKAPRIYA

www.rasikapriya.org
web@rasikapriya.org
sangitika@rasikapriya.org

October 2020 ISSN:2348-5892

SANGITIKA

A Peer reviewed journal on Indian Music

KRITI 7 GITAM 1

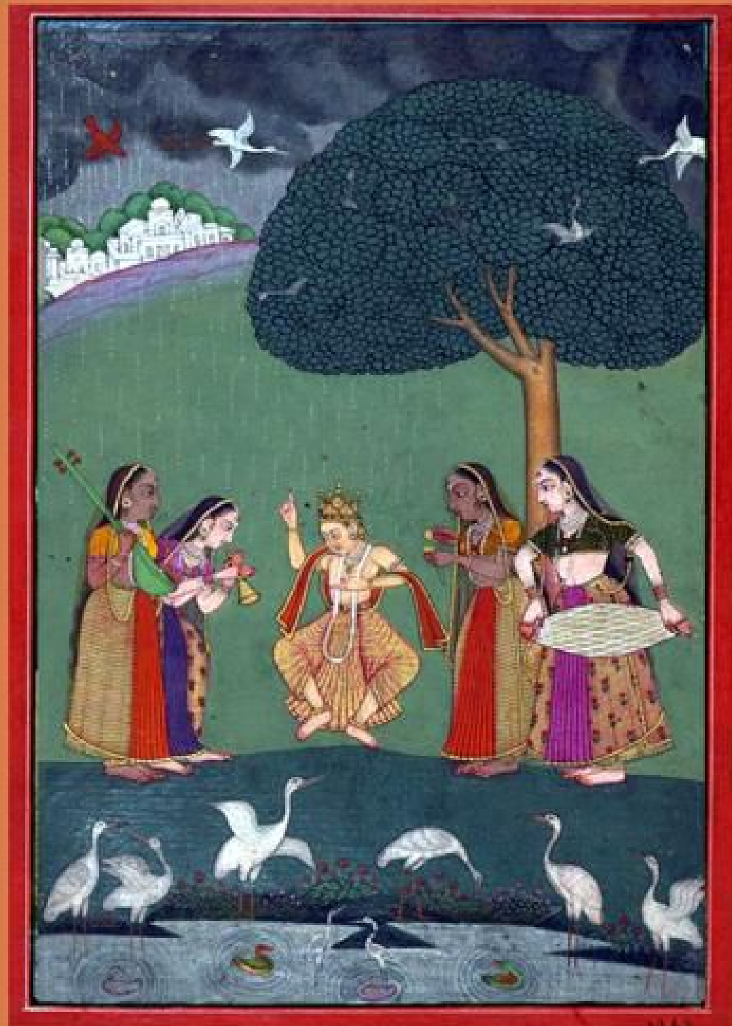

Ragini Malhar

Contents

1.	**SANGITA MUKTHAVALI**	3
2.	**An Innovative pedagogy in Indian Music through ICT e-Learning in the times of Corona – Dr. Sharbari Banerjee**	7
3.	**An Introduction to Vocology: The Art of Professional Voice Management – Fr.Dr. Paul Poovathingal CMI**	15
4.	**A comparative study of Ritualistic theatre In Kerala and Srilanka – Dr SAN Parera**	20
5.	नाट्यशास्त्र में वर्णित 'साधारण स्वर' विधान उनके भेद व प्रयोग विधि डॉ. के.ए .चंचल	27
6.	प्रचीनकाल में भारतीय संस्कृति तथा संगीत का विकास डॉ. सुरेन्द्र नाथ सोरेन	32
7.	नाट्यशास्त्र का रचनाकाल :एक अध्ययन आकाश मान	38
8.	***Synthesis of Gayaki and aesthetic elements through learning underdifferent Gharanas – Bhavik Mankad***	45
9.	***Contribution of Dr Aran Mistry of Farukkhabad Gharana in the field of Tabla -*** **Chirag Solanki**	54
10	***The essense of Guru – Shishya Parampara in Agra Gharana –*** **Tara Kannan**	63
11	***Variant Rhythmical patterns in the compositions of Oothukad Venkata Kavi-*** **Vidya T**	76
12	बिहार के ध्रुपद गायकी के क्षेत्र में 'बेतिया घराना' अंजु बाला	85
13	नाद ब्रह्म का अनन्य समाराधक : पं. जसराज – प्रो. शारदा वेळांकर	92
14	**A Tribute to Pt. Jasraj- Subir Mallik, IAS**	93
15	**Rare Composition**	96
16	**News about the World of Music**	97

नाट्यशास्त्र का रचनाकालः एक अध्ययन

आकाश मान *पीएच.डी. शोधार्थी*
प्रो.गौरांग भावसर
प्रो.राजेश केलकर
प्रदर्शन कला संकाय, एम एस यूनिवर्सिटी, वड़ोदरा

सार– *भरत मुनि कृत नाट्यशास्त्र अतिरोचक व महान ग्रन्थ है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक नाट्यशास्त्र को संगीत की समस्त विधाओं का आधार माना जाता है। यह शोध सार के अन्तर्गत शोधार्थी द्वारा नाट्यशास्त्र का अध्ययन किया गया है, साथ ही कई विद्वानों के मतों का भी अध्ययन इसके रचनाकाल को जानने की जिज्ञासा स्परूप किया गया है।*

नाट्यशास्त्र की रचना का काल निर्धारण एक जटिल प्रश्न है और इस विषय पर निरंतर विद्वानों द्वारा नवीन तर्कों को प्रस्तुत किया जा रहा है। जिस प्रकार भरत मुनि के व्यक्तित्व को लेकर अनेकों प्रश्न बने हुए हैं कि भरत कौन थे ? कहाँ के निवासी थे ? इनका काल क्या था ? यह एक व्यक्ति था या यह कोई जाति विशेष का सूचक शब्द है, जो किसी एक जाति को प्रस्तुत करता था। इस विषय पर विद्वानों के दो पक्ष सामने आते हैं। जिसमें से एक पक्ष भरत की वैयक्तिक सत्ता को स्वीकार करता है और दूसरा भरत को एक कल्पना मान उसका खंडन करता है। कुछ विद्वानों का यह भी मानना है कि नाट्यशास्त्र किसी एक व्यक्ति विशेष की रचना न होकर कई विद्वानों की नाट्य साधना का प्रारब्ध है।

इसी प्रकार नाट्यशास्त्र की रचना का काल निर्धारण भी एक विवादास्पद प्रश्न है। इस सम्बन्ध में विदेशी व स्वदेशी कई विद्वानों द्वारा अपने–अपने मतों व तर्कों को कई शोध के माध्यम से समय–समय पर प्रस्तुत किया गया। नाट्यशास्त्र संगीत की दृष्टि से एक अत्यंत महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसे सामवेद के पश्चात् पंचमवेद के रूप में स्थान प्राप्त है। जिससे इसकी महत्ता का पता चलता है। शोधार्थी द्वारा इन सभी तथ्यों का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया गया तथा कुछ नाट्यशास्त्र संस्करण सम्बन्धी मत इस प्रकार हैं। विदेशी विद्वानों में भारतीय संस्कृति की रूचि व जिज्ञासा के परिणाम स्वरूप विलियम जोन्स ने 1789 में कालिदास के अभिज्ञान शाकुंतलम का अध्ययन किया। जिसके बाद भारतीय ग्रंथों के प्रति बढ़ती हुई रूचि के फलस्वरूप एच० एच० विल्सन ने 'सिलेक्ट स्पेसिमैन्स ऑफ दी थिएटर ऑफ हिंदूज' (तीन भाग कलकत्ता 1826–27) में नाट्यशास्त्र की चर्चा की और बताया कि नाट्यशास्त्र सदैव के लिए ही विलुप्त हो चूका है[1]। जिससे समस्त शोधकर्ताओं के मन में एक निराशा उत्पन्न हुई परन्तु 1865 में हाल द्वारा धनंजय के 'दशरूपक' के अनुवाद में नाट्यशास्त्र की एक पाण्डुलिपि के कुछ

---

(1) नाट्यशास्त्र और भरत काल निर्धारण के प्रयास / त्रिपाठी डॉ०राममूर्ति / संगीत / फरवरी, 2004 / पृष्ठ–11

अंश प्रकाशित किए गए। इस क्रम में 1874 में जर्मन विद्वान टेमान ने इस विषय पर शोधलेख भी प्रस्तुत किया।

रैग्नो, जो कि फ्रेंच विद्वान थे, उनकें द्वारा 1880 में सत्रहवें अध्याय, फिर पंद्रहवें ,सोलहवें और इसके पश्चात् छठे और सातवें अध्याय को प्रकाशित किया। इन्हीं के ही शिष्य ग्रोसे ने 1888 में अठाईसवें और 1898 में आरंभ के एक से चौदह तक के अध्यायों को प्रकाशित किया। इसके बाद 1894 में भारतीय विद्वानों द्वारा भी नाट्यशास्त्र के संस्करणों का दौर आरंभ हुआ। 1894 में पं० शिवदत्त और पं० काशीनाथ पांडुरंग द्वारा जो भी शुद्ध–अशुद्ध तर्क व संदिग्ध रूप में नाट्यशास्त्र उपलब्ध था, उसको सैंतीस अध्ययों के रूप में एक सम्पूर्ण नाट्यशास्त्र को प्रकाशित किया, 1943 में इसका द्वितीय संस्करण आया। जिसमें 36 अध्यायों का वर्णन प्राप्त होता है। जिसमें से 1894 से 1943 के मध्य तक दो संस्करण, एक काशी से व दूसरा बडौदा से प्रकाशित हुए। 1929 में चौखम्बा से पं० बटुकनाथ शास्त्री और पं० बलदेव उपाध्याय और बडौदा में रामकृष्ण कवि द्वारा नाट्यशास्त्र के 1826 में एक से सात तक, 1934 में आठ से अठाहरा तक और 1954 में इक्कीस से सत्ताईस तक के अध्यायों को प्रकाशित किया गया। काशी और गायकवाड संस्करणों में कुल 40 पांडुलिपियों का सहारा लेकर प्रकाशित किया गया।[2] बडौदा के प्रथम संस्करण में 40 पाण्डुलिपि और दूसरे संस्करण में 44 पाण्डुलिपिओं को स्थान दिया गया। इस प्रकार विभिन्न प्रकार के संस्करणों के प्रकाशन के पश्चात् इसकी रचना काल के सही समय को जानने के अथक प्रयास भी किये गए। इसका रचना काल ईसा पूर्व से लेकर चौथी शताब्दी के मध्य तक का समय विभिन्न विद्वानों द्वारा बताया जाता रहा है और इसी को निश्चित करने के बहुत से प्रयास विभिन्न विदेशी विद्वानों द्वारा भी किये गए, परन्तु यह पूर्णतया भ्रम को उत्पन्न करने वाला व निष्परिणाम ही रहा, परन्तु फिर भी इसका अनुकरण भारतीय विद्वानों द्वारा कई वर्षों तक किया जाता रहा और इसका समय ईसा के जन्म से सौ–दो सौ वर्षों पूर्व या बाद के बीच में असमंजस्य के रूप में बना रहा। इन समस्त संस्कारणों को देखने व अध्ययन के पश्चात् शोधार्थी का मानना यह है कि नाट्यशास्त्र एक ऐसा महत्वपूर्ण ग्रन्थ है जिसको जानने व समझने का प्रयास कई दशकों से चला आ रहा है। शोधार्थी को अध्ययन के पश्चात् ऐसा प्रतीत होता है कि नाट्यशास्त्र की विषय–वस्तु को देखा जाए या इसका अध्ययन किया जाए तो यह ज्ञात होता है कि यह परम्परा वैदिक काल से ही चली आ रही है। इसकी प्राचीनता का एक उदाहरण यह भी है कि सम्बंधित विषय–वस्तु का उल्लेख वेदों, ब्राह्मण ग्रंथो, महाभारत, रामायण जैसे महान प्राचीन ग्रंथों में भी देखने को मिलता है और इन्हीं साक्ष्यों के आधार पर यह ज्ञात होता है कि भारत में ईसा के कई

(2) वही

सौ सदियों पूर्व यह नाट्यशास्त्र पूर्ण रूप में विकसित हो चूका था।
भारतीय शास्त्रीय संगीत की प्रथा के अनुरूप नाट्यशास्त्र के आद्य रचियता प्रजापति ब्रह्मा को माना जाता है। जिन्होंने ऋग्वेद से पाठ्य, सामवेद से गीत, यजुर्वेद से अभिनय, तथा अथर्ववेद से रस को धारण कर एक पंचम वेद का प्रादुर्भाव हुआ जिसे नाट्यवेद कहा गया। जिसमें नाट्य को विशेष स्थान दिया गया। एक वृतांत के अनुसार त्रेता काल में जनता उदासी से विपत्ति ग्रस्त थी, तब भगवान इंद्र के अनुरोध पर ब्रह्मा ने चारों वर्णों और मुख्य रूप से शुद्र जाति के आमोद–प्रमोद और आनंद हेतु नाट्यवेद नामक सामवेद की रचना की।[(3)] जिस प्रकार परमपुरुष के निश्र्वास से आविर्भूत वेद राशि के द्रष्टा विविध ऋषि प्रकल्पित है। उसी प्रकार महादेव द्वारा प्रोक्त नाट्यदेव के द्रष्टा शिलाली एवं कृशाश्र्व और भरतमुनि माने गए हैं। शिलाली एवं कृशाश्र्व द्वारा संकलित नाट्यशास्त्र वर्तमान में मौजूद नहीं है। शोधार्थी के अनुसार अब मात्र भरत मुनि द्वारा बनाया हुआ ग्रन्थ ही प्राप्त हुआ है। जो आज नाट्यशास्त्र के नाम से प्रसिद्ध है। इस नाट्यवेद के अंतर्गत लोक जीवन से जुडी सभी मान्यताएँ और परम्पराएँ समाहित हैं। इस कारण जन मानस में उसका आदर बढ़ गया। यह धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष इन चारों वर्गों के प्रदाता एवं जनमानस के मंगल का कारण बनी। भरत मुनि कृत नाट्यशास्त्र एक ऐसा भारतीय ग्रन्थ है, जिसमें सभी ललित कलाओं के द्वारा मनुष्य के जीवन की कल्पना की गई। शोधार्थी के अनुसार इस प्रकार का ग्रन्थ किसी भी देश या किसी भी भाषा में नहीं लिखा गया है, जिसके अंतर्गत कला के सभी स्वरूपों का इस प्रकार का वर्णन किया गया है। हिन्दुस्तान में जितनी भी कलाएं मौजूद है, इन सभी के विभिन्न पक्षों पर जिस प्रकार का संतुलित एवं परिष्कृत विवेचन इस ग्रन्थ के अंतर्गत मिलता है, वैसा किसी भी अन्य ग्रन्थ में देखने को नहीं मिलता। इस प्रकार इस ग्रन्थ के सभी पक्षों को देखने के पश्चात इसे पंचमवेद की संज्ञा दी गई। नाट्यशास्त्र के काल का निर्धारण करने पर भी कई तथ्यों की ओर शोधार्थी द्वारा ध्यानाकर्षित किया गया है कि नाट्यशास्त्र में चार प्रकार के अलंकारों की चर्चा की गई है–उपमा, रूपक, दीपक और यमक। जबकि भामह–दंडी का समय छठी शताब्दी है और इस समय तक इन अलंकारों की संख्या 40 तक पहुँच चुकी थी। इस प्रकार पाणिनी से पहले शिलाली नामक आचार्य द्वारा नटसूत्र की रचना की गई थी। पाणिनी का समय पांच सौ ईसा पूर्व बताया जाता है। कहा जाता है कि नटसूत्र की रचना के बाद ही नाट्यशास्त्र की रचना की गई, जिससे ज्ञात होता है कि पाणिनी से पूर्व नाट्यशास्त्र रचा गया। हाल की गहसताई या गाथासप्तशती एक प्राकृत भाषा का ग्रन्थ है, जिसमें 700 गाथाएं प्राप्त होती हैं। इसकी एक कथा में आलिंगन

([3]) श्री भरत मुनि प्रणित सचित्रय नाट्यशास्त्र सचित्र / शुक्ल शास्त्री बाबूलाल / पृ0–39

को रति नाटक का पूर्व रंग बताया गया है। नाटक के पहले पूर्वरंग के अनुष्ठान की आवश्यकता की अवधारणा भी नाट्यशास्त्र का ही प्रभाव माना जा सकता है। गहसताई की रचना का समय पहली शताब्दी के करीब माना जाता है। अतः इससे पूर्व नाट्यशास्त्र की रचना हो चुकी थी। यह बात अलग है कि गहसताई में उपग्रहम श्रृंगार अभिनय की तुलना नाट्य के पूर्वरंग से की गई है। पूर्वरंग का वर्णन नाट्यशास्त्र के पांचवे अध्याय में किया गया है। गाथा–सप्तशती का काल 200–400 ई० के मध्य में माना जाता है। अतः नाट्यशास्त्र की रचना इसके पूर्व हुई होगी, यह भी मुमकिन है क्योंकि नाट्यशास्त्र के कुछ भाग ई० के 1–2 शताब्दियों में सम्मिलित किये जाते रहे हैं और इसका मुख्य भाग पहले ही तैयार हो चुका हो, इस विषय में निम्नलिखित साक्ष्य है। यदि नाट्यशास्त्र के सूत्रभाष्य की शैली के स्वरूप का अध्ययन करें तो इसकी एतिहासिकता प्रमाणित होगी। सूत्रकाल के करीब लिखी जाने के कारण शायद सूत्र रूप नाट्यशास्त्र को नाट्यवेद कहकर वेद के समान आदर दिया गया। यदि नाट्यशास्त्र के रूप में कुछ श्लोक और कुछ पद्यात्मक के विवरण में यवनादी शब्द जुड़ते गए तो मात्र इस आधार पर सम्पूर्ण नाट्यशास्त्र को आधुनिक नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि नाट्यशास्त्र के मुख्य भाग जो महत्वपूर्ण माने जाते हैं और जो कलाओं के पूर्ण विस्तार को वर्णित करते हैं, उनकी रचना ई०पू० 5वीं शताब्दी तक हो चुकी थी। इसमें जो भी भाग जोड़े गए या अन्य संकलित किये गए, वह भी 1–2 शती में हुए होंगे। जो कि महाभारत व अन्य पुराणों आदि में भी हुआ माना जाता है। नाट्यशास्त्र के विविध विषयों के अध्ययन द्वारा अनेकों प्राचीन आचार्यों और ग्रंथों का वर्णन प्राप्त होता है। प्रो० रेग्नो और जे० ग्रोसे ने प्रथम एक से चौदह तक के अध्याय का सम्पादन किया और इन्होने नाट्यशास्त्र का काव्यशास्त्र और छन्दशास्त्र के स्वरूप के अध्ययन को ध्यान में रखते हुए, इसका समय ईसवी सन से कम एक शती पूर्व निर्धारित किया और इसके बाद इतिहासकार व संस्कृत विद्वान महामहापोध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने भी विभिन्न तत्वों के विश्लेषण के पश्चात रेग्नो का अनुकरण करते हुए ईसा पूर्व दो शती निर्धारित किया।

इसी क्रम में प्रो० सिल्वा लेवी ने प्राचीन जुनागढ़ शिलालेखों में उदगृत शब्दों में नाट्यशास्त्र के साथ साम्यता पाई और इसी के आधार पर अपने काल निर्धारण को स्थापित किया। इन शिलालेखों में शक आदि जातियों का वर्णन प्राप्त होता है। इस कारण नाट्यशास्त्र का काल ईसवी की दूसरी शताब्दी स्वीकारा, परन्तु प्रो० काणे इस बात से सहमती नहीं रखते और कहते हैं कि यह भी संभव है कि इन शब्दों का सर्वप्रथम उपयोग नाट्यशास्त्र में ही हुआ हो और बाद में नाट्यशास्त्र से इन शब्दों को ग्रहण किया गया हो और इस मतानुसार नाट्यशास्त्र का रचनाकाल ईसा की द्वितीय शताब्दी के पूर्व माना जाता

है[4]। विख्यात विद्वान मनमोहन घोष के अनुसार नाट्यशास्त्र में वर्णित संस्कृत, आर्ष संस्कृत (आद्य,आर्ष या पाणिनी पूर्व) है।[5] म०म० काणे के अनुसार नाट्यशास्त्र में विश्वकर्मा, पूर्वाचार्यों, कामसूत्र, कामतन्त्र, बृहस्पत, नारद, ताण्डु, पशुपत आदि वर्णित हैं। अंगहारों के अध्ययन के विषय में ताण्डु, ध्रुवा और गन्धर्व के विषय में नारद, अर्थशास्त्र के विषय में बृहस्पति, गृह रचना तथा वास्तुकला के विषय में विश्वकर्मा, शब्द लक्षण के विषय में पूर्वाचार्यों को ब्रह्मा और शिव द्वारा नियुक्त किया गया है। इन प्राचीन आचार्यों एवं ग्रंथो के नामों का उल्लेख होने से यह तो अवश्य पता चलता है, कि यह सभी आचार्य नाट्यशास्त्र की रचना के काल में पूर्ण ख्यति प्राप्त कर चुके थे और इनके मतों का अनुसरण सभी के द्वारा किया जा रहा था। इन प्राचीन आचार्यों के साथ–साथ नाट्यशास्त्र के एतिहासिक होने का पूर्व प्रमाण प्राप्त होता है।[6] मनमोहन घोष के अनुसार नाट्यशास्त्र पाणिनी के बाद का ग्रन्थ है। इसके साथ ही नाट्यशास्त्र में जिन संगीत वाद्यों का उल्लेख प्राप्त होता है वह ईसा पूर्व के युग से हैं, परन्तु तत् वाद्यों का जो जटिल विवरण नाट्यशास्त्र में देखने को मिलता है, वह उसकी एतिहासिकता को स्पष्ट करता है। नाट्यशास्त्र के अंतर्गत जिथर (छहतारा, जितार) का उल्लेख नहीं है, परन्तु हार्प (वीणा) का वर्णन है[7] किन्तु इस बात में संदेह है कि भरत ल्यूट (बीन) से परिचित थे या नहीं। इस समय में जो वीणा प्राप्त होती है, धनुष के समान थी जिसमें तांत के तारों का प्रयोग हुआ था। इतिहास की दृष्टि से देखने पर ज्ञात होता है कि हार्प ईसा पूर्व 3000 की है परन्तु मूर्तिकला के जो प्रमाण प्राप्त होते हैं, इस तथ्य के अनुसार, भारत में ईसा 300 में यह लुप्त हो गई थी। कुषाण काल में हार्प के अतिरिक्त ल्यूट के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। नाट्यशास्त्र के उन्नतिसवें अध्याय के अंतर्गत मात्र हार्प के अंगुली साधना की चर्चा प्राप्त होती है। उसमें तार या पर्दों पर स्वर निकासी सम्बन्धी कोई साक्ष्य प्राप्त नहीं होते।

यह भी सम्भव माना जाता है कि नाट्यशास्त्र के कुछ भागों को पहली–दूसरी शताब्दी में जोड़ा जाता रहा हो, परन्तु इसका मूल भाग ईसा के पहले ही रचित हो चूका था। इस प्रकार नाट्यशास्त्र में देश में प्रचलित जितनी भी भाषाओं का वर्णन मिला है, उनसे इसका काल ईसा पहले का सिद्ध होता है। डॉ० के० सी० पाण्डेय द्वारा अपनी पुस्तक अभिनव गुप्त में भरत के काल पर संक्षिप्त चर्चा की गई है। डॉ० के० सी० पाण्डेय के अनुसार भरत की उपस्थापन शैली पूर्णतः पौराणिक प्रतीत होती है[8] और पुराणों के विषय में ऐसा दिया गया था।

---

(4) भारतीय नाट्य परम्परा और अभिनव दर्पण/गैलोरी वाचस्पति/पृ0–28–29

(5) नाट्यशास्त्र प्रथम खंड/घोष मनमोहन/पृष्ठ–4–36

(6) नाट्यशास्त्रम/शुक्ला शास्त्री बाबूलाल /पृष्ठ–41

(7)नाट्यशास्त्र का काल/गुप्त भरत /संगीत/जून 2004/पृष्ठ–4

(8) नाट्यशास्त्र और भरत काल निर्धारण के प्रयास/त्रिपाठी डॉ०राममूर्ति/संगीत/फरवरी 2004 पृ0–27

नाट्यशास्त्र के वर्तमान स्वरूप का पक्का प्रमाण छठी शताब्दी में विद्यमान है। डॉ० के० सी० पाण्डेय के अनुसार भरत चौथी से पांचवी शताब्दी के मध्य स्थित हैं और इससे असहमत होने का कोई ठोस प्रमाण नहीं प्राप्त होते हैं। नाट्यशास्त्र में संस्कृत और प्राकृत भाषा जिस रूप में प्राप्त होते हैं वह अश्वघोष के काव्यों में उपयोग की गई है। वह अपेक्षाकृत बाद की है। नाट्यशास्त्र के सत्रहवें अध्याय में सात भाषाओं का वर्णन प्राप्त होता है। इस आधार पर नाट्यशास्त्र का समय चौथी शताब्दी के पूर्व का माना जाता है। नाट्यशास्त्र के अंतर्गत भारत की कई जनजातियों का भी वर्णन प्राप्त होता है। डॉ० मनमोहन घोष के अनुसार बर्बर एवं पुलिंदों के साथ आंध्र और द्रमिल का उल्लेख प्राचीन होने की अवधारणा को सूचित करता है।

निष्कर्ष- नाट्यशास्त्र सम्बन्धी दो पक्ष प्राप्त होते हैं, एक वह जो वैक्तित्व सत्ता के समर्थन करते हैं और दूसरा वह जो भरत नामक समूह का समर्थन करते हैं। इस विवादस्पद प्रश्न का कई प्रकार से सुलझाने का प्रयास किया गया। 1826 के पश्चात नाट्यशास्त्र के संस्करणों सम्बन्धी कई कार्य समय–समय पर हुए और उसी के आधार पर नाट्यशास्त्र के अंतर्गत 36 अध्यायों के होने का पता चलता है।

शोधार्थी इसी को आधार मानते हुए नाट्यशास्त्र की महत्वता को समझता है, क्योंकि नाट्यशास्त्र कला की गंगोत्री है, जिसमें सभी प्रकार की कलाओं का समावेश देखने को मिलता है। इसे पंचमवेद की संज्ञा इस कारण ही प्रदान की गई क्योंकि ऐसी कोई भी कला प्राप्त नहीं होती, जो इस ग्रन्थ के अंतर्गत प्राप्त न होती हो। इस ग्रन्थ की एतिहासिकता का पता इसमें वर्णित कलाओं से होता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि नाट्यशास्त्र एतिहासिक होने के साथ–साथ सभी कलाओं का कोश भी है। यह वैदिक काल से चली आ रही परम्परा है। कई ग्रंथों आदि के अध्ययन से भी इसकी एतिहासिकता ज्ञात होती है। इस प्रकार सभी के मतों व साक्ष्यों के अध्ययन के आधार पर भरत कृत नाट्यशास्त्र का समय ईसा पूर्व चौथी शताब्दी ज्ञात होती है, क्योंकि जो भी साक्ष्य प्राप्त हुए हैं वह इसकी एतिहासिकता को नकार नहीं सके और इसी कारण नाट्यशास्त्र एक प्राचीनतम ग्रन्थ व पंचमवेद के रूप में संगीत के क्षेत्र में स्थापित है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भारतीय नाट्य परम्परा और अभिनय दर्पण / गैरोली वाचस्पति / PK4415N2A2G2
2. नाट्यशास्त्र प्रथम खंड / घोष मनमोहन / मनीषा ग्रंथालय कलकत्ता / सन्–1952
3. नाट्यशास्त्रम / शुक्ला शास्त्री बाबूलाल / MUS14461PK4415B4 N2–1
4. नाट्यशास्त्र का काल / गुप्त भरत / संगीत / जून 2004
5. नाट्यशास्त्र और भरत काल निर्धारण के प्रयास / त्रिपाठी डॉ०राममूर्ति / संगीत / फरवरी 2004
6. नाट्यशास्त्र / संगीत पत्रिका / मार्च–अप्रैल–1960
7. नाट्यशास्त्र विभिन्न संस्करणों का कालक्रमानुसार विवेचन / पटेल रमेश / संगीत पत्रिका / नवम्बर–1994

आंतरराष्ट्रीय बहुभाषिक शोध पत्रिका

प्रिंटिंग एरिया

Printing Area International Interdisciplinary Research Journal in Marathi, Hindi & English Languages

October 2020, Issue-70, Vol-01

Editor

Dr. Bapu g. Gholap

(M.A.Mar.& Pol.Sci.,B.Ed.Ph.D.NET.)

"Printed by: **Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.** Published by **Ghodke Archana Rajendra** & Printed & published at Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.,At.Post. Limbaganesh Dist,Beed -431122 (Maharashtra) and Editor **Dr. Gholap Bapu Ganpat.**

Reg.No.U74120 MH2013 PTC 251205

Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.

At.Post.Limbaganesh,Tq.Dist.Beed

Pin-431126 (Maharashtra) Cell:07588057695,09850203295

harshwardhanpubli@gmail.com, vidyawarta@gmail.com

All Types Educational & Reference Book Publisher & Distributors / www.vidyawarta.com

40) कोरोना संकट के दौरान विदर्भ प्रांत में डिजिटल मीडिया के उपयोग का अध्ययन...
सुश्री. रुपाली उत्तमराव अलोने & प्रो.डॉ. अनिल कुमार राय (अंकित) ||181

41) सार्वजनिक तथा निजी बैंकों द्वारा अपनाए गए कम्प्यूटरीकरण से कर्मचारियों के ...
सपना कैन & डॉ. आर.के. सिंघल, ग्वालियर (म.प्र.) ||191

42) नाट्यशास्त्र में वर्णित ताल वाद्य
Akashman, Gaurang Bhavsar & Chirag Solanki, Vadodara ||193

www.vidyawarta.com/03 | http://www.printingarea.blogspot.com

के पश्चात् कर्मचारियों के कार्य करने में तेजी आ जाती है और कर्मचारी अपने कार्य को प्रभावी तरीके और शीघ्रता से करते हैं सार्वजनिक और निजी दोनों ही बैंक के कर्मचारी अपने कार्य का निष्पादन शीघ्रता से करते हैं क्योंकि बैंक चाहे सार्वजनिक हो या निजी किन्तु उनके कार्य करने का तरीका लगभग एक जैसा ही होता है इसीलिए कार्य निष्पादन में कम्प्यूटरीकरण के बाद कोई भी अन्तर नहीं होता है।

सुझाव

१. बैंकों में कम्प्यूटर प्रशिक्षण की सुविधा होनी चाहिए।

२. बैंकों में कम्प्यूटरीकरण की आधुनिक तकनीकों का कर्मचारियों को ज्ञान होना चाहिए।

३. कम्प्यूटरीकरण सरल एवं सहज होना चाहिए जिसे कर्मचारी आसानी से प्रयोग कर सके।

४. कर्मचारियों को अच्छी तरह से कम्प्यूटर के प्रोग्राम अपडेट करवाते रहना चाहिये जिससे वे आधुनिक तकनीकियों से परिचित हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची

१. श्री सुरेन्द्र कुमार (२००२) —कम्प्यूटराइजेशन इन बैंकिंग ऑपरेशन ए केस ऑफ ग्वालियर जोन ऑफ स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया'' जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर

२. Balasubramanya S. “IT Wave breaks over banking”, (ITy,Aug-Sep2002)

३. Bortal KM and Martin DC (1998) . Management, IIIrd Edition, McGraw Hill, Newyork

❑❑❑

42

नाट्यशास्त्र में वर्णित ताल वाद्य

Akashman
Researcher

Gaurang Bhavsar
Research Guide, Department of Tabla

Chirag Solanki
Faculty of Performing Arts,
The Maharaja Sayajirao University of Baroda,
Vadodara

****

सार— नाट्यशास्त्र समस्त कलाओं का आधार है। नाट्यशास्त्र मात्र नाट्य का ग्रन्थ न हो कर संगीत की सभी कलाओं का मूल है। नाट्यशास्त्र में भरत मुनि ने संगीत का सम्पूर्ण ग्रन्थ है। इस शोध लेख में शोधार्थी द्वारा नाट्यशास्त्र में वर्णित ताल वाद्यों की चर्चा की है। इस ग्रन्थ में भरत मुनि द्वारा सौ ताल वाद्यों का वर्णन किया है। जिनमें से कुछ वाद्यों का पूर्ण विवरण दिया गया है। इसके अतिरिक्त ताल के विभिन्न पहलुओं वर्णन किया गया है।

संगीत का उदय, सृष्टि के प्रारंभ से ही हो चूका था तथा संगीत का इतिहास उतना ही प्राचीन है, जितना मानव मनो भावों हैं। मानव प्रयास द्वारा ही संगीत कला अलग—अलग युगों में अधिक विकसित हुयी। आदि काल से ही संगीत मन के भावों को प्रकट करने का एक षक्तिषाली साधन है। अलग—अलग भावों को प्रकट करने वाली भिन्न ध्वनियाँ ही संगीत आर्विर्भाव मूल आदि कारण ऐसा माना जाता है, कि इन अलग—अलग ध्वनियों से ही समस्त वाद्ययंत्रों की उत्पत्ति हुई होगी। भारतीय संगीत के इतिहास में वाद्यों का एक विशेष स्थान है। भारतीय संगीत का पद पुरातन परम्परा में से सर्वश्रेष्ठ है। इसमें वर्णित सामग्री

प्राचीनता का अमूल्य भंडार है। अपितु इतिहास निर्माण में महत्वपूर्ण है। प्राचीन भारतीय शिल्पों कला में उदधृत वाद्य वर्तमान में शेध का विषय है। वाद्यों का वर्ण प्राचीन चित्रों, मूर्तियों गुफाओं इत्यादि में देखने को मिलते है जैसे भरहुत, भाजा, मथुरा, गांधार, साँची, अमरावती, नागार्जुनकोंडा, कोणार्क आदि स्थानों शिल्पकशतियाँ प्राप्त होती है जिसमें दक्षिण भारत के बेल्लर, चिदंबरम आदि स्थानों के मन्दिरों में जो चित्र उपाब्ध होते है, उनमें तन्तुवाद्य, सुषिरवाद्य तथा चर्मवाद्य (अवनद्ध वाद्य) के विभिन्न प्रकार प्राप्त होते है— अजंता, बाग, तंजौर आदि स्थालो में भी यह आकृतियाँ प्राप्त होती है। पिछले कई दशकों में वाद्यों में विभिन्न बदलाव आए जो कि इतिहास के विविध काल खंडो में दशर्नीय है तथा शिल्प द्वारा वाद्यों के दर्शन होते है। भारतीय संगीत वाद्य पर कई लिखे गए शोध पत्र तीसरी शताब्दी पूर्व के प्राप्त होते है। गौतम बुद्ध के युग को चित्रित करते समय भारत की प्राचीन कला भाजा, भरहुत, साँची आदि वर्णन प्राप्त होता है।[1] प्रकृति की गोद में पोषित होने वाले मानव की काव्य रचना, चित्रकला, संगीतशास्त्र आदि कलाओं में लय का होना पाया जाता है। लय के साथ ताल का प्रार्दुभाव हुआ, यह तथ्य सर्वमान्य है। शोधार्थी को अध्ययन द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि प्रत्येक संगीत—परम्परा में ताल का विशेष महत्व पाया जाता है, जो कि मानव—मस्तिष्क की उपज से सम्बन्धित होता है। संगीत में ताल वाद्यों का प्रचालन वैदिक काल से पाया जाता है, जिससे स्पष्ट यह स्पष्ट है, कि तालों का प्रचालन प्राचीन काल में भी था। भारतीय ताल वाद्यों को जानने के लिए कुछ किवदन्ती प्रचलित है। जिनके के आधार पर तालवाद्यों अविश्कर्ता ब्रह्माजी को माना जाता है।

ऐसा माना जाता है कि त्रिपुरासुर का संहार करने के लिए शिवजी द्वारा तांडव नृत्य किया गया तथा यही ताल वाद्यों के जन्म का आधार बना। ऐसा माना जाता है कि उस असुर के चर्म को गणेशजी ने पृथ्वी में गड्ढा खोदकर मढ़ा और उसका वादन किया जिसे प्रथम वादन के रूप में देखा जाता है। साम गान में दुन्दुभी पर ताल दी जाती थी। दुन्दुभी अर्थात (एक प्रकार का ढोल), भूमि दुन्दुभी अर्थात् (जमीन में गढ्ढा खोदकर उसके मुख पर खाल मढ़ी जाती थी), आडम्बर आदि ताल वाद्यों का वर्णन वैदिक काल में पाया जाता है, जिससे यह प्रतीत होता है कि वैदिक युग में संगीत बहुत समृद्ध अवस्था में था तथा अनेक ताल वाद्यों का प्रयोग किया जाता था। वैदिक युग में ताल वाद्यों का उल्लेख ६००ई.पू. बृहदारण्यक उपनिषद में, ५००ई. पू. रामायण में देखने को मिलता है। जिसमें घट, डीमडीम, दुन्दुभी, भेरी, मृदंग आदि ताल वाद्यों का उल्लेख प्राप्त होता है। महाभारत काल में भी ताल वाद्यों का उल्लेख प्राप्त होता है।[1] प्राचीन ग्रन्थ में वर्णन प्राप्त होता है, कि भूमि दुन्दुभी को आधार मान कर मृदंग का निर्माण किया गया इसके उपन्तर पणव, झल्लरी, पटह आदि वाद्य प्रचार में आए, जिनका वर्णन भरत मुनि द्वारा प्राप्त होता है। मृदंग को पखवाज कहते है, किन्तु प्राचीन काल में ''पुष्कर'' वाद्य भी कहा जाता था। भरत नाट्यशास्त्र, जो भारतीय संगीत का आधार ग्रन्थ माना जाता है, जो कि गायन, नृत्य तथा वादन के सम्बन्ध में भी अत्याधिक उपयोगी सिद्ध होता है। ताल वाद्यों के विवरण में भरत मुनि द्वारा मृदंग, दुर्दुर, पणव, उर्ध्वक, आलिंग्य झंझरी, पटह आदि वाद्यों का वर्णन तथा वाद्यों का प्रयोग उत्सव, मंगलकार्य, युद्ध तथा अवसर पर किया जाता था।[1] भरत मुनि द्वारा रचित ग्रन्थ नाट्यशास्त्र में वर्णित अवनद्ध वाद्यों का वर्णन करने के पहले अवनद्ध वाद्यों की विशेषता व लक्षण पर प्रकाश डालना उचित होगा वह वाद्य जिनका मुख चमड़े से मढ़ा हो तथा भीतर से पोले होते है, उन पर हाथ, लकडी की छोटी—छोटी छडी या किसी अन्य वस्तु द्वारा आघात किया जाता है, उन वाद्यों को अवनद्ध वाद्य कहते है।

अवनद्ध वाद्यों का प्रयोग संगीत में लय तथा ताल के प्रयोग हेतु किया जाता है। प्राचीन काल से संगीत में लय एवं ताल के लिए विभिन्न वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। चर्तुर्विध आतोद्यों में अवनद्ध अर्थात चर्मावृत वाद्यों का स्थान प्रमुख है। गीत तथा वाद्य के साथ ताल एवं लय को प्रदर्शित करने के लिए वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। मृदंग पणव तथा दुर्दुर जैसे वाद्यों के लिए पुष्कर की संज्ञा सर्वमान्य है।

नाट्यग्रह के मंडप विन्यास के प्रसंग में रंग देवता के समक्ष जो संगीत आयोजना किया जाता था, उसमें शंख, दुन्दुभी, मृदंग, पणव आदि वाद्यों की ध्वनि का एक साथ वादन किया जाता था। शोधार्थी को अध्ययन के पश्चात् ज्ञात होता है कि शिव के तांडव नृत्य के साथ ताल व लय को प्रस्थापित करने के लिए भिन्न–भिन्न अवनद्ध वाद्यों का प्रयोग किया जाता था। मृदंग, भेरी, पटह, माणड, डीमडीम, गोमुख, पणव तथा दुर्दुर वाद्यो का प्रयोग भावनाओं को प्रकट करने, तो कहीं युद्ध के समय साहस और उत्साह के लिए भी उतना ही महत्वपूर्ण था। श्रीमद भगवत गीता में युद्ध के समय पर भेरी, पणव तथा गोमुख जैसे– विभिन्न वाद्यों का वर्णन प्राप्त है। अवनद्ध वाद्यों को भांड अथवा भांडवाद्य की संज्ञा भी दी गई है और उनके वादको को भाण्ड़ वादक कहा जाता था। तंडू मुनि के द्वारा बनाए गए तांडव नश्त्य में गान तथा भांड वाद्यों का समन्वय बताया गया है। रंगभूमि में नर्तकी के प्रवेश पर तंत्री वाद्य तथा भाण्ड वाद्य (अवनद्ध वाद्य) दोनों का समुचित रूप से प्रयोग किया जाता था। भांड वाद्य (अवनद्ध वाद्य) का वादन अंगहारों के अनुसार सम. रक्त, विभक्त, स्फुट तथा शुद्ध वादन शैली के अनुसार किया जाता था। गीत तथा नश्त्य में भाण्डवाद्य (अवनद्ध वाद्य) का वादन किस स्थान से आरंभ किया जाना है, इसका सम्पूर्ण विवरण व स्पष्ट नियम–विधान नाट्यशास्त्र के पंचम अध्याय उदश्ष्ट में पाया जाता है।() नृत्य तथा गीत के प्रसंग में वाद्यों का प्रथम आघात ग्रह कहा जाता था। भरत मुनि द्वारा रचित नाट्यशास्त्र की नाट्य कला में मृदंग आदि वाद्यों का स्थान महत्वपूर्ण है। नाट्य को प्रस्तुत करने वाला अभिनेत्री अर्थात् नटी के लिए यह अति आवश्यक समझा जाता था, कि उसे ताल तथा लय का सम्पूर्ण ज्ञान हो। भाण्डवाद्यों के वादन, लक्षण आदि से भंली–भांति परिचित हों तथा नट के लिए आवश्यक था, कि वह वाद्य वादन की कला में पारंगत हो। भरत मुनि द्वारा प्रणित नाट्य गेय–प्रधान होने के कारण नट तथा नटी के लिए संगीत की शिक्षा का पूर्ण धनी होना आवश्यक था। नाट्यशास्त्र के अनुसार वाद्य की प्रतिकृति है, तथा उसका विस्तार विस्तृत रूप से किया जाना चाहिए।

वाद्येषु यत्नः प्रथंम तु कार्यः।
शय्या हि नाटयस्य वदन्ति वाद्यम्।।
वाद्ये च गीते च हि समप्रयुक्ते।
नाट्यप्रयोगे न विपत्तिमेति।।()

भाण्ड वाद्य के आचार्य स्वाति मुनि का नाम नाट्यशास्त्र में विशेष रूप से निदृष्टि है। इंद्रध्वज उत्सव पर नाट्य उपयोग सामग्री की सुसज्जा किये जाने पर नारद को गंधर्व के रूप नियुक्त किया गया था। जिसका वर्णन नाट्यशास्त्र के प्रथम में प्राप्त होता है। स्वाति मुनि तथा नारद मुनि अपने विषयों के मान्य आचार्य है, तथा गंधर्व एवं वाद्य के सम्बन्ध में इनकी सर्वज्ञान शास्त्र परम्परा है। भरत मुनि द्वारा नाट्यशास्त्र में वर्णित है कि अवनद्ध वाद्यों का विवरण स्वाति व नारद मुनि के अनुकूल है।

गान्धर्व चैव वाद्यं च स्वातिना नारदेन च।
विस्तारगुणसम्पन्नमुक्तं लक्षणकर्मतः।।
अनुवृत्त्या तयोः स्वतेरातोद्यानां समासतः।
पौष्कराणां प्रवक्ष्यामि निर्वृत्ति सम्भवं तथा।।()

पुष्कर–वाद्यों को उद्भव के विषय में स्वाति मुनि द्वारा निम्न आख्यायिका नाट्यशास्त्र में निदृष्ट है। भरत मुनि के अनुसार अवनद्ध वाद्यों में मृदंग तथा दुर्दुर अंग वाद्यो में प्रमुख वाद्य है, झल्लरी औरा पटह आदि वाद्य प्रत्यंग वाद्यों में गौण है। इन सभी वाद्यों का वादन उत्सव, विवाह आदि प्रसंगों में नाट्य के अनुकूल की विभिन्न अवस्थाओं में किया जाता था। नाट्य के अंतर्गत विभिन्न अंगों में आपसी सांजस्य उत्पन्न करने के लिए व किसी की न्यूनता की पूर्ति के लिए या नाट्य की शोभा में वृद्धि उत्पन्न करने के लिए वाद्यों का प्रयोग किया जाता था। भरत मुनि के अनुसार अवनद्ध वाद्यों का पूर्ण विकसित स्वरूप पुष्कर वाद्य है, तथा पुष्कर वाद्य के अर्न्तगत के भेरी, पटह, झांझ, दुन्दुभी तथा डीम–डीम जैसे विभिन्न वाद्यों के कारणों अथवा बोलों के निकास की वह क्षमता प्राप्त नहीं होती थी, जो पुष्कर वाद्य में प्राप्त होती थी। नाट्यशास्त्र में भरत मुनि द्वारा का कहा गया है, कि शरीर रूपी वीणा अर्थात कंठ से निकलने वाले स्वर पुष्कर वाद्य में झन्कृत हो उठते है। पुष्कर वाद्य की संगति गायक के

अनुसार निश्चित होती थी तथा वादक द्वारा उसका ही अनुसरण इस वाद्य के द्वारा किया जाता था तथा उनकी करण रचना वही होती थी, जो गीत के अक्षरें द्वारा स्पष्ट होती है। गीताक्षरें के लघु—गुरु, तथा यति, पाणि आदि अंगों का सम्पूर्ण अनुसरण पुष्कर वाद्य में किया जाता था।

यं यं गाता स्वरं गच्छेत् तमातोद्यैः प्रयोज्येत्।
यतिपाणिसमायुक्तं गुरूलवक्षरान्वित्।।[()]

भरत मुनि द्वारा रचित नाट्यशास्त्र एतिहासिक दृष्टि से भारतीय शास्त्रीय संगीत का सर्वप्रथम सर्वमान्य उपलब्ध आधार ग्रन्थ माना जाता है। जिसके तैंतीसवें अध्याय के अर्न्तगत अवनद्ध वाद्यों के विषय में सम्पूर्ण विस्तृत जानकारी प्रप्त होती है। भरत मुनि द्वारा इस ग्रन्थ में अवनद्ध वाद्यों की संख्या लगभग एक सौ बताई गयी है, परन्तु भरत मुनि द्वारा मुख्य रूप से पुष्कर वाद्य का ही पूर्ण विवरण प्राप्त होता है। भरत मुनि द्वारा पुष्कर वाद्य के तीन प्रकार होते थे, जिनमें (आलिंग्य व उर्धवक) दो को खडा रखकर तथा तीसरा लिटाकर, गोद में रख कर अर्थात् की अंक में रखकर वाजाने के कारण उसे अंकिक (मृदंग) कहा गया त्रिपुष्कर वाद्य का दोनों हाथों से वादन किया जाता था। भरत मुनि द्वारा नाट्यशास्त्र में पुष्कर वाद्य की उत्पत्ति के सम्बन्ध में निम्न उक्ति प्राप्त होती है।

अनध्याये कदाचितु स्वातिर्वे दुर्दिने दिने।
जलाशयं जगामाय सलिलानयनं प्रति।।[()]

अर्थात एक दिन वर्षाकाल में अनध्याय के दिन (जब अध्ययन का अवकाश था), आकाश मेघें से भरा हुआ था, तब स्वाति मुनि जलाशय के निकट जल लेने के लिए गए, तब इन्द्रदेव द्वारा पृथ्वी को जल से पूरित करने के उद्देश्य से जल की धारा को तीव्र प्रवाह से छोड़ा दिया तथा तेज हवा के साथ वर्षा की बूंदे कमल पतों पर गिरी तथा ध्वनि उत्पन्न हुयी, उस ध्वनि से महामुनि स्वाति उस प्रवाह से उत्पन्न होने वाली ध्वनि के स्वर को ध्यान पूर्वक सुना जिससे स्वाति मुनि प्रेरित हुए और इस ध्वनि ने उनके हृदय पर गहरा प्रभाव डाला। इससे हृदय में समाहित ध्वनि के ज्येष्ठ, मध्यम, तथा कनिष्ठ रूपों में विभाजित के विषय में गंभीरता पूर्वक विचार करते हुए, वे अपने आश्रम पर लौटकर आए और वहां उन्होंने विश्वकर्माजी की सहायता द्वारा मृदंग तथा पुष्कर वाद्यों पणव, दर्दर आदि वाद्यों का सृजन किया, जिसका वर्णन नाट्यशास्त्र में पूर्ण विवरण के साथ प्राप्त होती है।[()]

गत्वा सृष्टं मृदंगाँश्च पुष्करानसृजत्ततः।
पणवं दर्दराश्चैव सहितो विश्वकर्मणा।।[ड]

तत्पश्चात् देवताओं की दुन्दुभी को देखकर मुरज, अलिंग्य, उधर्वक तथा आंकिक की रचना की और विलक्षण कार्य पूर्ण करने में निष्णात स्वाति मुनि ने मृदंग, दर्दर तथा पणव आदि पुष्कर वाद्यों की रचना की तथा, उसके बाद उन्होंने इन वाद्यों को चमड़े से मढा और तंत्रियों की सहायता से कसा। भरत मुनि कृत नाट्यशास्त्र ग्रन्थ में प्रचलित अवनद्ध वाद्यों की संख्या सौ बतलाई गयी है और उनको स्वर के अनुसार दो वर्गों में बाँटा गया है। जिन्हें अंग और प्रत्यंग नाम से जाना जाता है। जिन वाद्यों को स्वर में मिलाया जा सकता है, उन्हें अंग वाद्य कहा जाता है— जैसे, मृदंग, पणव, दर्दुर तथा जिन वाद्यों को स्वरमें नहीं मिलाया जा सके उन्हें प्रत्यंग वाद्य कहा है— पटह, झल्लरी, भेरी, दुन्दुभी। भरत मुनि ने स्वाति मुनि द्वारा अविष्कृत वाद्य पुष्कर की पूर्ण चर्चा नाट्यशास्त्र में की है तथा पुष्कर वाद्य तीन भागों के सम्मिलित होने के कारण उसे त्रिपुष्कर वाद्य कहा जाता है—आंकिक, उर्ध्वक और आलिंग्य।

पौष्करस्य तु वाद्यस्य मृदंगपणवाश्रयम।
विधानं तु प्रवक्ष्यामि दुर्दरस्य तथैव हि।।[()]

अर्थात्— भरत मुनि द्वारा पुष्कर वाद्यों के विषय में यह कहा गया है कि पुष्कर वाद्यों के वादन के सम्बन्ध में मृदंग, पणव तथा दर्दर वाद्य यंत्रों का विधि को वर्णन सविस्तार करूँगा। भरत मुनि द्वारा अवनद्ध वाद्यों की वादन विधि त्रिपुष्कर के आधार पर निरूपण किया है। पुष्कर वादन से सम्बन्धित सोहल अक्षर, चार मार्ग, दो प्रकार के लेप, छः प्रकार के करण, तीन प्रकार की यति, तीन लय, तीन गति, तीन प्रचार, तीन प्रकार के संयोग, तीन प्रकार की पाणि, पांच प्रकार के प्रहार, तीन प्रकार के मार्जन, बीस प्रकार के अलंकार तथा वादन की अठारह जातियों इन सभी का विवरण दिया गया है।[()]

भरत मुनि द्वारा नाट्यशास्त्र में पुष्कर वाद्यों के प्रयुक्त होने वाले अक्षरों की संख्या सोलह बताई गयी है, जो इस प्रकार है—

कखगघटठढणनतथदमरलह इति षोडशक्षरणीह।
नियतं पुष्कर वाद्ये वाककरणे: संविधेयानि।।()

शोडष अक्षर पुष्कर वाद्यों के लिए भरत ने सोलह अक्षर बताये है—क, ख, ग, घ, ट, ठ, ढ, ण, न, त, थ, द, म, र, ल, ह।

१. त्रिपुष्कर के दाहिने (आंकिक)— क ट ढ त थ र

२. बाए में— ध म ह

३. उर्ध्वक में— ग द

४. आलिंग्य में— ख ठ ग ध ल।

चतुमार्ग (चारमार्ग)— नाट्यशास्त्र में आंकिक, उर्ध्वक और आलिंग्य के प्रयोगों की चार विधियाँ बताई गयी है, जिन्हें अड़िता, आलिप्ति, वितस्ता, गोमुखी मार्ग कहा जाता है।()

चारमार्ग	वाद्य
1) अड्डिता	आंकिकमृदंग के वाममुख से
2) आलिप्त	आंकिक का वाममुख और उर्ध्वक
3) वितस्ता	आंकिक के दाहिनेमुख और उर्ध्वक का वादन
4) गोमुखी	आंकिक की बहुलता

लेपन— आंकिक के वाम मुख तथा अर्ध्वक के मुख में इच्छित स्वर की उत्पत्ति आवश्यकतानुसार लेप लगाने पर आधारित है। आज भी लेपन किया जाता है, अंतर मात्र यह है, कि नाट्यशास्त्र में वर्णित लेपन विधि में विशेष प्रकार की मिट्टी के स्थान पर आज तबले पर लोहें का चूर्ण या कोयले का चूर्ण आदि का प्रयोग किया जाता है। मध्ययुग में प्राचीन पुष्कर वाद्यों के लेपन के द्वारा परिवर्तित देखा जा सकता है। मध्ययुग में लेपन राल, राख आदि द्वारा किया जाता था।

षटकरण— नाट्यशास्त्र में अंग वाद्यों के साथ प्रत्यंग वाद्यों का संयोग कैसा है। इसके लिए छः प्रकार के करणों का उल्लेख किया गया है। जो वर्तमान में दक्षिण संगीत पद्धति में विद्यमान है, परन्तु उत्तर भारतीय संगीत—पद्धति में करण का वर्तमान में कोई प्रयोग नहीं होता। नाट्यशास्त्र में वर्णित करण— **१**.रुप **२**.कृत प्रतिकृत **३**.प्रतिभेद **४**.रुपशेष **५**.औध **६**.प्रतिशुष्क।

त्रियति: नाट्यशास्त्र में यातियाँ तीन प्रकार की बताई गई है। **१**.समा **२**.स्त्रोतोगता **३**.गोपुच्छा। लय की प्रवृति के नियम को यति कहते है। अर्थात— लय का कितने प्रकार से प्रयोग की जा सकती है, कितने कर्म से हो सकती है, इसके नियमों का वर्णन ही है, यति है, तथा वर्तमान में भी इनका प्रयोग होता है।

त्रिलय— भरत मुनि द्वारा लय तीन प्रकार की कही गयी है—**१**.द्रुत, **२**.मध्य, **३**.विलंबित। इन तीनों लयों का प्रयोग वर्तमान में भी होता है।

पाणि(त्रिपाणि)— पाणि को भरत मुनि ने यति और लय के साथ जोड़कर बताया गया है तथा पाणि तीन प्रकार की बताई है—**१**.सम पाणि **२**.उर्धपाणि **३**.उपरि पाणि। पाणि शब्द में इस बात पर अधिक बल दिया है कि क्रिया हाथ से की जाए। वर्तमान में भी इनका प्रयोग किया जाता हैं तथा पाणि के स्थान पर ग्रह शब्द का प्रयोग किया जाता है।

त्रिगति— भरत मुनि द्वारा नाट्यशास्त्र में गायन, वादन के साथ पुष्कर वाद्यों का किस प्रकार से योग होना चाहिए, इसके तीन प्रकार बताये है। **१**.तत्व **२**.अनुगत **३**.ओघ

त्रिप्रचार— त्रिप्रचार हाथ के चलन के विशेष प्रकारों का प्रचार कहा है तथा इसके तीन प्रकार बताये है। **१**.सम **२**. विषम **३**. समविषयम (मिश्र)।

त्रिसंयोग— भरत ने नाट्यशास्त्र में अक्षरों का प्रयोग तीन प्रकार से बताया गया है।

१. गुरु संयोग (घा ता धा)

२. लघु संयोग (तिरकिट)

३. गुरु लघु संयोग (धाति धागेन धातिट)

पांचपाणिपहर— प्राचीन काल में मृदंग वादन के लिए हस्त प्रहार के पांच प्रकार कहे है, जिन्हें पंचपाणि के नाम से जाना जाता था।

१. सम पाणि— चारो उंगलियों से प्रहार।

२. अर्ध पाणि— आधी हथेली से प्रहार करना।

३. पार्श्व पाणि— एक चौथाई हथेली से प्रहार करना।

४. प्रवेशिनी— पहली उंगली से अग्रभाग से प्रकार करना।

त्रिप्रहार— भरत ने नाट्यशास्त्र में पंचपाणि के प्रहारों से तीन प्रकार के प्रहारों का रूप बताया गया है।

१. निगृहीत— जिससे ध्वनि हो किन्तु गूंजण हो, आधुनिक मृदंग के क किट बोलो के समान

२. अर्थ निगृहीत— आधुनिक तबले में न का बोल ऐसा है

३. मुक्त— जिससे ध्वनि पूर्ण गूंज युक्त हो आधुनिक मृदंग में ग,दि आदि

त्रिमार्जना— नाट्यशास्त्र में पुष्कर वाद्य को स्वर में मिलाने की विधियाँ त्रिमार्जना कहलाई। नाट्यशास्त्र में वर्णित मार्जना इस प्रकार है—

मार्जना	स्वर
1) मायुरी	ग,स,प
2) अर्धमायुरी	स,रे,घ
3) कार्माखी	रे,स,प

अलंकार— भरत ने नाट्यशास्त्र में पुष्कर वाद्यों में उन्नति लाने के लिए इनकी संख्या २० बताई गयी है, जो मृदंग पर बजाये जाने वाले सोलह अक्षरों के विभिन्न विधान संयोग से बनते है।

जाति— भरत ने नाट्यशास्त्र में रस भाव के अनुसार वादन करना है। इस विषय में नाट्यशास्त्र में १८ जातियों का विवरण प्राप्त होता है। जाति का भी वर्तमान में भी प्रयोग हो रहा है।

निष्कर्ष—इस प्रकार यह कहा जा सकता है, कि प्राचीन से आधुनिक संगीत परम्परा पर यदि प्रकाश डाला जाए तो यह स्पष्ट होता है कि भरत मुनि द्वारा निदृष्टि आतोद्य विधान वर्तमान में संगीत का सर्वमान्य आधार है। भरत काल से वर्तमान काल तक के सफर में भारतीय संगीत के रूप आकार—प्रकार, स्वभाव में कई बदलाव विभिन्न देशी—विदेशी संस्कृतियों का प्रभाव दर्शीनीय है। परिणाम स्वरूप संगीत में होने वाले मूलभूत बदलाव व सिद्धान्तों को भरत द्वारा रचित नाट्यशास्त्र के रूप में स्वीकार किया जाता है। भरत मुनि द्वारा ताल वाद्यों के लिए आतोद्य शब्द का प्रयोग बहुत ही सौन्दर्यपूर्ण व वृहद् रूप में किया गया है। ध्वनि के रूप में विभिन्न माध्यमों से उत्पन्न टकराने, घर्षण, धारा प्रवाह आदि आतोद्य का स्वरूप बने जिसमें तन्त्री, घन आदि निर्मित हुए। गन्धर्व का पयार्य व दूसरा अत्याधिक महत्वपूर्ण तथ्य लय व ताल है जिसको भावों द्वारा प्रकट करने के लिए अवनद्धातोद्य अर्थात वह सभी वाद्य जिनमें स्वर की उत्पत्ति चमड़े से मढ़े हुए वाद्य के रूप में की जाती है अर्थात ताल वाद्य जैसे पुष्कर, दुर्दर, मृदंग इत्यादि तथा वर्तमान में तबला पखावज इत्यादि।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

१. भरत नाट्यशास्त्र/शुक्ल शास्त्री बाबूलाल /चौखम्बा पब्लिकेशन/नई दिल्ली २०१२/ ISBN-९७८.९३८१६०८२३४

२. भरत और उनका नाट्यशास्त्रम/मिश्र ब्रजवल्लभ/उत्तरमध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र/ इलाहाबाद/१९८८

३. नाट्यशास्त्र/अनुवाद द्विवेदी डॉ. पारसनाथ /सम्पूर्णानन्द विश्वविद्यालय/वाराण्सी १९१७

४. नाट्यशास्त्र प्रथम खण्ड/घोष मनमोहन /मनीषा ग्रन्थालय/कलकत्ता

५. भारत में अवनद्ध वाद्यों की परम्परा/श्रीमल प्यारेलाल /संगीत कला विहार/१९६३

६. हमारे संगीत वाद्य/कृष्णास्वामी एस/संगीत कला विहार/१९६४

७. प्राचीन भारतीय संगीत में ताल—पंरपरा/परांजपे ए.शरदचन्द्रश्रीधर/संगीत कला विहार/१९६४

८. भरतोक्त मृदंग—वादन से सम्बन्धित कुछ शब्दों का स्पष्टिकरण/शर्मा शरण भगवत/संगीत कला विहार/अप्रैल—१९८३

❑❑❑